Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

रामचरितमानस में राजधर्म

रणधीर झा* अन्नु झा जैमिनी खानवे*****

* इंदिरा प्रियदर्शिनी महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
** इंदिरा प्रियदर्शिनी महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
*** इंदिरा प्रियदर्शिनी महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – प्रत्येक व्यक्ति इस भू-भाग के किसी ना किसी क्षेत्र में निवास करता है। समूह में रहने से वह, समाज का निर्माण कर लेता है, और समाज मिलकर, राष्ट्र का निर्माण करता है। इस प्रकार भू-भाग का वह क्षेत्र ही, देश अथवा राष्ट्र के रूप में परिभाषित होता है। समाज, सरल व सहज रूप से व्यवस्थित होकर गतिशील एवं सक्रिय रहे व सुख-शांति की प्राप्ति हो, यह कर्तव्य समाज में रहने वाले प्रजा या नागरिक का होता है। समाज जब अव्यवस्थित होने लगता है, तब उस भू-भाग में निवासरत समाज को नियंत्रित करने हेतु नियंत्रक के रूप में राजा की आवश्यकता होती है। यह राजा ही, धर्म-शास्त्र, नीति-शास्त्र में वर्णित नियमों के अनुसार राज्य का संचालन करता है, और यही राजा का राजधर्म होता है। प्रजा के मध्य राजा की प्रशस्ति, राजा के नीतिज्ञ होने अथवा ना होने में निहित होती है। विभिन्न धर्मशास्त्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, मनुस्मृति व नीतिशास्त्र में राजधर्म के विभिन्न मूल्यों का उल्लेख किया गया है, जिस आधार पर वैदिक कालीन राजा, राजधर्म का निर्वहन किया करते थे। गोस्वामी तुलसीदास कृत-रामचरितमानस के अनुसार, तुलसी का राजा-श्रीराम, दिव्य गुणों से सम्पन्न, धर्म-शास्त्र के आधार पर राजधर्म का पालन करते दिखाई पड़ते हैं, राजा-श्रीराम की यह वैशिष्ठता ही 'राम-राज्य' की संकल्पना का विकास करती है।

शब्द कुंजी – रामराज्य, तुलसी, रामचरितमानस, राजधर्म।

शोध का उद्देश्य-इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य, गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित साहित्यिक एवं धार्मिक ग्रंथ- रामचरितमानस में वर्णित राजा के गुणों को जानना एवं राजधर्म, शासन विधि, युद्धनीति आदि पक्षों से संबधित नैतिक मूल्यों को राजा-राम ने किस प्रकार जीवनचर्या में प्रस्तुत किया है, को समझने का प्रयास किया गया है।

शोध प्रविधि- यह शोध एतिहासिक एवं धार्मिक ग्रन्थ पर आधारित है, अत: अध्ययन में पवित्र ग्रंथ-रामचरितमानस एवं अन्य ग्रन्थ, पत्रिकाओं का अध्ययन कर, शोध में उल्लेखित किया गया है। शोध हेतु प्राथमिक स्त्रोत का उपयोग किया गया है।

शोध परिसीमन- प्रस्तुत शोध अध्ययन, तुलसीकृत रामचरितमानस में राजा के गुण व उसमें प्रस्तुत राजधर्म के अध्ययन-विश्लेषण तक सीमित है।

'यद् वदामि मधुमत तद् वदामि यदीक्षे तद् वनन्ति मा।
त्विषीमानस्मि जूतिमानवान्यान हन्मि दोहत:'।। [1]

अपने देश या मातृभूमि के संबंध में जो हितकर कहता है, देखता है वह भारत भूमि का सहायक है। अत: स्पष्ट है कि, भारतीयों के मनो-मस्तिष्क में अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम, आदर व बलिदान की भावना के साथ 'राष्ट्र-प्रथम' का सूत्र वैदिक काल से ही इस भू-भाग के निवासियों में सदैव स्थापित रहा है।

इस निश्चित भू-भाग पर जन-समुदाय के व्यवस्थित संचालन एवं व्यवस्था हेतु राजा को अधिकारी माना गया है, जिसके कर्तव्यों के निर्वहन के कारण समाज संगठित, संतुष्ट, समृद्ध, राष्ट्रभक्त रहती है। बुद्धिमान, कौशल युक्त मंत्रीमंडल, सैन्य-शक्ति, राज-कोष, शैक्षणिक व सामाजिक व्यवस्था, सभा-समिति का गठन आदि राजधर्म के अन्तर्गत राजा के कर्तव्यों का निरूपण करते हैं। वैदिक काल में भी अर्थववेद में राजधर्म का वर्णन विभिन्न सूक्तों में किया गया है। यथा-

'राजा राष्ट्राणां पेश:' [2]
'राजा हि कं भुवनानाममश्री:' [3]

अर्थात कहा गया है कि, राजा 'राष्ट्र का सौन्दर्य' है और राष्ट्र की शोभा है। वहीं मनुस्मृति में वर्णित श्लोक में राजा को इन्द्र, अनिल, यम, अर्क, अग्नि, वरूण, चन्द्र तथा कुबेर इन आठ देवताओं के अंश को लेकर बनाया हुआ माना गया है।

'इन्द्रानिलयमार्काणामग्नेश्च वरूणास्य च।
चन्द्र वित्तेषयोश्चैव मात्रा निर्हत्य शास्वती:'।। [4]

महाभारत में युधिष्ठर ने कहा है कि-

'सर्वधर्मो राजधर्म प्रधाना। सर्वे वर्णा: पाल्यमाना भवनति'।। [5]

अर्थात, समस्त धर्मो में राजधर्म को श्रेष्ठ निरूपित किया गया है। इस तरह कुछ मूल-भूत तत्वों के विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि, वैदिक साहित्य और पुराणों में कहा गया है कि-

'सर्वा विद्या राजधर्मेशु युक्ता:। सर्वे लोका राजधर्म प्रविष्ठा:'।। [6]

अर्थात, सभी विद्या और समस्त लोक राजधर्म में ही समाहित है। वैदिक साहित्य में राजा और राजधर्म को महत्तम स्थान प्रदान किया गया है, जो प्राचीन भारतीय काल तक मान्य व प्रतिपादित रहा, किंतु विदेशी कबीलाई, मुस्लिम आक्रांताओं के भारत पर आक्रमण के साथ ही ई0 सन् 1000 के

लगभग से भारतीय राजधर्म में मुस्लिम संक्रमण के कारण अवनति आरंभ हुई। गोस्वामी तुलसी दास के धार्मिक व पवित्र ग्रन्थ रामचरितमानस के सृजन ने रामराज्य की संकल्पना का उदय किया जो, आज जन-मानस के पटल पर सरलता से अंकित हो गया।

इक्षुवाक वंश के सूर्यवंशी राजा, दशरथ के पुत्र श्री राम ने अयोध्या नगरी में, वैदिक धर्म-शास्त्र और नीति शास्त्र का समुच्चय बनाकर जिस राजधर्म की संकल्पना का निर्माण किया, उसे अठारहवीं शताब्दी में गोस्वामी तुलसीदास ने अवधी भाषा में लिखे साहित्य-कला के अद्धितीय पक्षों को स्पष करते हुये, भारतीय जन-मानस तक रामचरितमानस के माध्यम से जिस सुगमता से पहुँचाया, वह अनुकरणीय है।

रामचरितमानस के अनुसार, रावण का राज्य एकाधिनायकवाद का प्रतीक था, जहाँ-सचिव, भ्राता, पुत्र, मित्र, पत्नी, प्रजा, ब्राम्हण, आदि किसी के लिये कोई आदर सूचक, सम्मति का भाव नही था। रावण किसी को भी कष्ट देकर अपना अधिकार स्थापित करना चाहता था-

'भुज बल बिस्व बस्य करि राखेसि कोउ न सुतंग।
मंडलीक मनि रावन राज करइ निज मंत्र'।। [7]

इस प्रकार निरंकुश राज्य के विनाश हेतु भगवान श्री राम के सु-राज्य की अवधारणा प्रस्तुत
की गई है। जिसमें-

'दैहिक दैविक भौतिक तापा, रामराज नहिं कहुहिं व्यापा'। [8]
'राम राज नभगेस सचराचर माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहि' ।। [9]

अर्थात, रामराज में उक्त वर्णित प्रकार के सुखों का विधान किया गया है। इन सुखों में सत् गुण की प्रधानता थी, वही रावण राजा में तमो गुण की प्रधानता थी।

राजनैतिक व्यवस्था हेतु, श्रुति-स्मृति प्रतिपादित जिन नैतिक आदर्शो को तुलसी ने अपने मानसिक चक्षुओं से हमारे समक्ष रखा वह अभूतपर्व है। नीति ग्रन्थों में भी राजधर्म के तत्व, राजा और उसकी योग्यता, राज्य-प्रबन्ध, न्याय-व्यवस्था, कर्मचारी व नागरिक कर्तव्य आदि राजधर्म में समाहित माने गये हैं। राजा की महिमा का वर्णन करते हुये तुलसी ने लिखा है कि-

'रवि ससि, पवन बरूण धनधारी,अगिति काल जम सब अधिकारी।
आयसु करहिं सकल भयभीता,नवहिं आई नित तरन विनीता'।।[10]

तुलसी राजा राम को, ईश्वर का प्रतिनिधि बताते हैं-

'साधु सुजांन सुसील नृपाला ईस अंस भव परम कृपाला'। [11]

राजा का, नीतिज्ञ होना अत्यंत आवश्यक है। तुलसी का राजा, लोकतांत्रिक विधि से मंत्री की सलाह को ध्यानपूर्वक, श्रवण उपरांत निर्णय प्रगट किया करते थे-

'सुनि सनमानहि सबहि सुबानी, भनिति भगति नति गति पहिचानी'।।[12]

राजा को, अनीति से दूर रहने का उपदेश दिया गया है। गुरू वशिष्ठ, भरत को यह सीख प्रदान करते है कि-

'सचिव नृपति जो नीति न जाना'। [13]

अर्थात जो, राजा नीति नही जानता वह शोचनीय है। अयोध्याकांड के एक अन्य प्रसंग में श्री राम, लक्ष्मण को अनीति पूर्वक राज्य संचालन के परिणाम को व्यक्त करते हुये कहते हैं कि-

'जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी, सो नृप अवसि नरक अधिकारी।
रहहु तात असि नीति विचारी, सुनत लखनु भये व्याकुल भारी '।।[14]

राजा को घमंड रहित, शील तथा नम्र होना चाहिये। तुलसी, राजा राम की नम्रता या विनम्रता के बारे में लिखते है कि-

'राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा, कर कुठार आगे यह सीसा'।।[15]

इस पद में श्रीराम, विनम्रता प्रगट करते हुये भगवान परशुराम के क्रोध को शांत करते दिखाई पड़ते हैं। राजा का एक अन्य गुण 'शौर्य'' के विषय में गोस्वामी तुलसी गाते हैं कि-

'जो रन हमहि पचारै कोऊ, लरहिं सुखेन काल किनु होऊ'।[16]

उक्त पद से स्पष्ट होता है कि, राजधर्म पालन हेतु राजा में वीरता का गुण आवष्यक है।

राजा को दयावान, करूणाशील होना चाहिये। इस हेतु तुलसी लिखते हैं कि-

'तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा, करहहिं कृपा भानुकुल नाथा'।[17]

तुलसी का राजा राम, प्रजा-पालक की नीति का पोषक है-

'जेहि विधि सुखी होंहि पुर लोगा, करहिं कृपानिधि होई संजोगा'।।[18]

भरत को शिक्षा देते हुये वसिष्ठ मुनि ने कहा है कि, राजा को चाहिये कि वह प्रजा का पालन करे।

'अवसि नरेस वचन फुर करहू, पालहु प्रजा सोक परिहरहु'।[19]
'सोचिअ नृपति जो नीति न जाना, जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना'।[20]

राजा का यह धर्म है कि, वह शत्रुओं, दुष्टों से अपने राज्य व प्रजा की रक्षा करे। इस हेतु गुसाईं तुलसी लिखते है कि-

'निसिचर हीन करौ महि भुज उठाई पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाय जाय सुख दीन्ह।।[21]

राजधर्म के पालन हेतु आवश्यक है कि, राजा प्रजा के प्रत्येक वर्ग में समन्वय स्थापित करे। रामचरितमानस में तुलसी के राजा राम भरत को निर्देशित कर रहे हैं कि -

'देस कोसु परिजन परिवारू, गुरू पद रजहिं लाग छरू भारू।
तुम्ह मुनि मातु सचिव सिख मानी, पालेहु पुहुमि प्रजा रजधानी'।।[22]

दण्ड विधान, हेतु तुलसी के श्रीराम लंका कांड में अंगद को निर्देशित करते हुये कहते हैं कि-

'सुनु सर्वग्य प्रनत सुखकारी, मुकुट न होहिं भूप गुन चारी।
साम दाम अरू दंड बिभेदा, नृप उर बसहिं नाथ कह वेदा।।[23]

इस प्रकार हम देखते हैं कि, तुलसी के राजधर्म में मुख्यत: तीन अंग, साम-दाम-भेद श्रेष्ठकर माने गये हैं। दंड विधान राम राज्य में लुप्त ही रहा है। संभवत: इसकी आवश्यकता का अनुभव नही किया गया।

राज सत्ता के घमंड की ओर इंगित करते हुये तुलसी कहते हैं कि, राज-मद के कारण, राजा में दुर्गुणों का प्रवेश हो जाता है, जिसका त्याग करना अत्यंत दुष्कर है, फिर भी राम राज्य में राजमद त्याज्य ही रहा-

'कही तात तुम्ह नीति सुहाई, सब कठिन राजमदु माई'।। [24]

रामचरितमानस में शासन-विधि का वर्णन करते हुये तुलसी लिखते है कि-

'जौ पाँचहि मत लागै नीका, करहु हरषि हिंय रामहि टीका'। [25]

अर्थात, राम-राज्य में राजधर्म, का आधार धर्म व्यवस्था तथा जन-स्वीकृति था। किसी भी राजधर्म के सफलतम निर्वहन के लिये मंत्री परिषद का सुयोग्य होना आवश्यक होता है। मंत्री के गुणों का वर्णन करते हुये तुलसी लिखते हैं

कि–

'सबके वचन श्रवन सुनि कह प्रहस्त कर जोरि।
नीति विरोध न करिअ प्रभु मन्त्रिन्ह मति अति थोरी '।। [26]

तुलसी के राजधर्म के अनुसार, मंत्रियों को शीलवान, बलवान, उत्साही, निराभिमानी, धैर्यवान, सत्य व सत् से युक्त आदि गुणों से सम्पन्न होना चाहिये। बैर–द्वेष ना रखने वाला मंत्री होना चाहिये। मंत्रियों को धर्म–निष्ठ, राज्य का शुभचिंतक तथा स्वयं के स्वार्थो का त्याग करने वाला बताया गया है–

'सचिव वेद गुरू तीनि जो प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर, होई बेगिही नास'।। [27]

निष्कर्ष–तुलसी कृत साहित्य–रामचरितमानस में उल्लेखित, राजनीति व राजधर्म विषयक मूल्यों पर विचार करने से यही निष्कर्ष निकलता है कि, तुलसी का राजा और राज–धर्म, वर्तमान धर्म–निरपेक्ष लोकतंत्र ना होकर, धर्म–शास्त्र के आदर्शो पर आधारित धर्म–सापेक्ष, शास्त्र–निर्दिष्ट, स्वराष्ट्र की भावना से ओत–प्रोत, पंचायत राज था। जिसमें दैविक–गुणों से युक्त राजा, ऋषि–मुनि के संरक्षण व सलाह से, प्रजा का सहयोग प्राप्त कर राज्य का संचालन करता था। प्रजा–हित में राजा अपना सर्वस्व त्याग करने का साहस और क्षमता रखता था। तुलसी के अनुसार राजा का धर्मशील होना प्रथमत: आवश्यक है। तुलसी के राजनैतिक आदर्श में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में सभी को समान अवसर प्रदान करके न्याय दिलाना, ही राजधर्म का स्वरूप था।

इस तरह समस्त क्षेत्रों में समस्त प्रजा को समान अवसर उपलब्ध थे। संक्षेप में स्वामी करपात्री के शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं कि– रामराज प्रणाली अनन्त, ईश्वरीय, अपौरूषेय, धार्मिक, राजनैतिक आर्थिक शास्त्रों के आधार पर स्थित है। यह प्रणाली राजधर्म की पराकाष्ठा का प्रतीक है। गोस्वामी तुलसीदास ने 'स्वान्त: सुखाय' हेतु रामचरित मानस की रचना की है, किंतु रामचरितमानस ग्रन्थ 'सर्वान्त: कारण–सुखाय' का पर्याय बन गया है। तुलसी का राजधर्म उसमें निहित भारतीय मान्यताओं को अभिष्ट मानकर, त्रेतायुग में आदर्श राजधर्म की स्थापना करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अर्थववेद, काण्ड 12, मंत्र 56
2. ऋग्वेद, सूत्र 5– 3
3. हिन्दु राज्य शास्त्र, अंबिका प्रसाद बाजपेयी, प्रयाग सम्मेलन, पृष्ठ 130
4. मनुस्मृति– अध्याय 4, 28
5. हिन्दु राज्य शास्त्र, अंबिका प्रसाद बाजपेयी, प्रयाग सम्मेलन, पृष्ठ 5
6. महाभारत, शांतिपर्व, अ0– 63, श्लोक– 29
7. रामचरितमानस, बालकांड, दोहा–182
8. रामचरितमानस, उत्तरकांड 20 –1
9. वही, 21, 1–8
10. रामचरितमानस, बालकांड– 182, 10–13
11. पूर्वोक्त – 28
12. रामचरितमानस, बालकांड– 28–8–9
13. रामचरितमानस, अयोध्या कांड–172–4
14. पूर्वोक्त– 71–6
15. रामचरितमानस, बाल कांड– 181, 7
16. पूर्वोक्त –284 –2
17. रामचरितमानस, सुन्दर कांड– 772
18. रामचरितमानस, बालकांड – 205–5
19. रामचरितमानस, अयोध्या कांड– 175–1
20. पूर्वोक्त –172–4
21. रामचरितमानस, अरण्य कांड दोहा–9
22. रामचरितमानस, अयोध्या कांड – 315–8
23. रामचरितमानस, लंका कांड – 38–8–9
24. रामचरितमानस, अयोध्या कांड– दोहा 231–6
25. पूर्वोक्त – 5–3
26. रामचरितमानस, लंका कांड– 8
27. रामचरितमानस, सुन्दर कांड– दोहा 37

****